IJAER/Feb-March 2013/Volume-2/Issue-2 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Research

'कथा–साहित्य' में समाज एवं सामाजिक सम्बन्ध

डॉ. नवनीत वर्मा

व्याख्याता (हिन्दी)

चौ. ब.रा.गो. राजकीय कन्या महाविद्यालय, श्रीगंगानगर

कथा साहित्य और समाज एक दूसरे के पूरक हैं। साहित्यकार समाज में जन्म लेता है, समाज से ही वह अनुभव प्राप्त करता है, समाज की प्रत्येक गतिविधियों पर अपनी पैनी दृष्टि रखता है। समाज अच्छी–बुरी घटनाओं को यथार्थ एवं कल्पना का सहारा लेकर किसी साहित्य का सृजन करता है। चाहे वह उपन्यास हो, नाटक हो, कहानी अथवा लघुकथा। इन सबमें हमें समाज के रीति–रिवाजों, सभ्यता एवं संस्कृति की गहरी छाप दिखलाई पड़ती है। "सभी जातियों के इतिहास उनके उत्थान–पतन के चिह्न हमें कथा साहित्य में मिलते हैं।"[1] कथा काल्पनिक ही सही, लेकिन क्षण भर के लिए उससे यथार्थता को बोध होता है। कथा साहित्य से समाज विषेष को पता चलता है। प्रेमचन्द की कहानियां हों अथवा इलाचन्द्र जोषी की कहानियां, या जैनेन्द्र की कहीं न कहीं समाज की झलक मिलती है, काल का बोध होता है। केवल काल्पनिक कथा साहित्य है, जिसका समाज से विलग कुछ भी नहीं है। प्रेमचंद की कहानियों का सर्वेक्षण करें तो समाज की एक विषेष स्थिति का पता चलता है। "अपने समाज के सामाजिक जीवन को एक नई गति और एक नई दिषा प्रदान करने वाले प्रेमचन्द ने नारी की वेष्यावृत्ति की समस्या को "सेवा सदन" में प्रस्तुत किया।"[2] प्रेमचन्द्र उस समाज में जी रहे थे जहां तमाम घटनाएं घटित हो रही थीं। उनकी नजरों के सामने उन्होंने उसे अपने ही समाज में देखा, महसूस और फिर उसे कथा साहित्य में लिपिबद्ध किया।

पूर्व की कथाओं और आज की समकालीन कथाओं में काफी बदलाव आया है। किसी भी रूप में हम यह नहीं कह सकते कि द्विवेदी युग या छायावादी युग की कथा आज भी वैसी ही पूर्ववत है। इससे साफ जाहिर होता है कि जब जैसा समाज रहता है, उसका प्रत्यक्ष या परोक्ष प्रभाव साहित्य पर पड़ता है जिसे किसी रूप में अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

सामाजिक सम्बन्ध

कथा साहित्य में प्रत्येक पात्र हमारे समाज के ही पात्र होते हैं। सही चित्रण सजीवता को प्रकट करता है और पाठक वर्ग को संवेदनषील बना देता है। कथा साहित्य के पात्रों के साथ पाठक वर्ग एकाकार हो जाता है और यह महसूस करने लगता है कि कहीं न कहीं उस विषेष पात्र के रूप में स्वयं जी रहा है। हर सुख–दुःख में वही शामिल है। व्यक्ति के आपसी सम्बन्धों को साहित्यकार अपनी कथाओं में उकेरता है।

"पारस्परिक सम्बन्धों एवं क्रियाकलापों को सदैव स्थिर रखने के लिए लोग घटनाओं तथा अनुभवों को कथा के रूप में अपनाते हैं। कथा में भी उसकी चरम सीमा के साथ जिज्ञासा का अधिक तालमेल रहता है।"[3] सामाजिक अन्तः क्रिया के लिए दो तत्त्व अनिवार्य माने गये हैं, जो निम्न हैं–

1. पारम्परिकता
2. एक दूसरे के प्रति जागरूकता

हमारे समाज में पारस्परिक सम्बन्धों के लिए एक निष्चित व्यवस्था है। संस्था–समूह आदि में पारस्परिक सम्बन्ध होते हैं तो भीड़ आदि में प्रतिकूल सम्बन्ध होते हैं। सामाजिक विकास के साथ सामाजिक समस्याओं में भी वृद्धि होने लगती है। उस स्थिति में एक दूसरे के प्रति जागरूकता की आवष्यकता पड़ती है। सामाजिक सम्बन्धों में जहां तक और संयोग दृष्टिगत होता है वहां दूसरी ओर संघर्ष की ऐसी सिंिति में व्यक्ति और समाज के अन्तः सम्बन्धों के लिए पहचान या जागरूकता की महत्ती आवष्यकता पड़ती है।

संदर्भ

1. डॉ. स्वर्णलता : हिन्दी उपन्यास साहित्य की समाजषास्त्रीय पृष्ठभूमि, पृ. 4
2. डॉ. रामविलास शर्मा : प्रेमचन्द और उनका युग, पृ. 157
3. डॉ. स्वर्णलता : स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास साहित्य की समाजषास्त्रीय पृष्ठभूमि, पृ. 2